आवश्यक निवेदन

संस्कृत में बहुत से ऐसे प्रार्थना के श्लोक हैं जिनमें देवी-देवताओं में परस्पर मनोरंजक संवाद कराकर उनसे मंगल की कामना की गई है। ये संवाद कई प्रकार के हैं। इनमें से कुछ में प्रेम, विनोद एवं हास-परिहास के भाव हैं तो कुछ में कलह, उपालंभ और व्यंग्योक्तियाँ भी अभिव्यक्त की गई हैं। श्रीकृष्ण सम्बन्धी संवादों में तो अधिकांश उनकी मनोहर बाललीला एवं आमोद-प्रमोद से ही भरे हुए हैं। इन देवी-देवता सम्बन्धी प्रार्थनापरक श्लोकों के अतिरिक्त कुछ और भी संवादपूर्ण रचनायें हैं जिनमें लौकिक पात्रों की ही चर्चा है और लोकसुलभ मनोभाव ही अंकित किये गये हैं। इन श्लोकों की यह विशेषता है कि इनके पढ़ने से पढ़ने वालों को मनोरंजन तो होता ही है साथ ही उनका भाषा का ज्ञान भी बढ़ता है और संस्कृत में प्रश्नोत्तर करने का ढंग भी कुछ आ जाता है।

प्रस्तुत पुस्तक में कुछ ऐसे ही सरल-सरस श्लोकों का संग्रह प्रकाशित किया गया है जिनसे संस्कृत के छोटे-छोटे विद्यार्थियों का भी मनोरंजन हो सके और भाषाज्ञान की वृद्धि के साथ उन्हें संस्कृत में कुछ प्रश्न-उत्तर करने की शैली का भी परिचय प्राप्त हो सके। इसका दूसरा लाभ यह है कि इन श्लोकों को कहीं सुनाकर वे दूसरों का भी मनोरंजन कर सकते हैं और अपनी वाक्कुशलता का भी परिचय देकर समाज में आदर प्राप्त कर सकते हैं। इसी दृष्टि से प्रत्येक श्लोक के नीचे उस श्लोक का सन्दर्भ लिख दिया गया है और फिर संस्कृत वाक्यों को देते हुए उनका हिन्दी अर्थ भी लिख दिया गया है जिससे इन श्लोकों का सन्दर्भ एवं अर्थ के स्वयं समझने तथा दूसरों को समझाने में भी विद्यार्थियों को सरलता हो सके।

इन संवादपूर्ण श्लोकों के अतिरिक्त अन्त में कुछ संस्कृत की प्रहेलिकायें (पहेलियाँ) भी दे दी गई है और उनका अर्थ एवं उत्तर भी लिख दिया गया है। यह सामग्री भी विद्यार्थियों के मनोरंजन एवं भाषाज्ञान में सहायक होगी और

वे दूसरों का भी मनोरंजन कर सकेंगे। उपर्युक्त सभी संवादश्लोक एवं प्रहेलिकायें भी इस पुस्तक में ऐसी ही संकलित की गई हैं जो अपेक्षाकृत सरल एवं सुरुचि-पूर्ण हैं तथा श्लोक आदि की कठिनता एवं कुरुचिपूर्ण अश्लीलादि भावों से रहित हैं। पहेलियों के अन्त में दो श्लोक समस्यापूर्ति के भी दे दिये गये हैं जो विद्यार्थियों के लिए अवश्य ही मनोरंजक सिद्ध होंगे और वे समस्यापूर्ति की प्रणाली से भी परिचित हो जायेंगे।

इस पुस्तक के प्रकाशन में शासकीय संस्कृत उपाधि महाविद्यालय, रीवा, मध्य-प्रदेश के प्राचार्य, हमारे माननीय मित्र श्री पण्डित रामनन्दन ओझा जी ने, जो व्याकरण-साहित्य के गंभीर वैदुष्य के साथ ही स्वभाव के अत्यन्त सरल एवं हास्यविनोद प्रेमी भी हैं, हमारी जो आर्थिक सहायता की है उसके लिये हम उनके अत्यन्त आभारी हैं और उन्हें हार्दिक कृतज्ञता अर्पित करते हैं।

आशा है, संस्कृत के विद्वान एवं विशेषकर विद्यार्थी इस पुस्तक का जन-साधारण में, सभा-गोष्ठियों में तथा विवाहादि के अवसरों पर अधिकाधिक उपयोग कर संस्कृत भाषा के प्रचार में हमारी सहायता करेगें।

वसन्त पञ्चमी
२०३१ वि०

विनीत
संकलनकर्ता

बाल-विनोद-माला

एक गोपी और कृष्ण का संवाद

कस्त्वं बाल ! बलानुजः, त्वमिह किं मन्मन्दिराऽशङ्कया,
बुद्धं, तन्नवनीत-कुम्भ-विवरे हस्तं कथं न्यस्यसि।
कर्तुं तत्र पिपीलिकाऽपनयनं, सुप्ताः किमुद्बोधिता—
बाला, वत्सगतिं विवेक्तुमिति सञ्जल्पन् हरिः पातु वः॥

एक समय किसी गोपी ने अपने घर में घुस कर श्रीकृष्ण को मक्खन टटोलते हुए पकड़ा और उनसे घर में घुसने का कारण पूछने लगी। इस पर श्रीकृष्ण अपने को निर्दोष सिद्ध करने के लिये बातें बना बना कर उत्तर देने लगे और वाक्चातुरी से गोपी को निरुत्तर कर दिया। इस श्लोक में यही दृश्य चित्रित किया गया है। देखिये, श्रीकृष्ण ने किस चतुराई से गोपी को उत्तर दिया है—

गोपी—कस्त्वं बाल ! अरे लड़के, तुम कौन हो ?

कृष्ण—बलानुजः—मैं बलदेव जी का छोटा भाई हूँ।

गोपी—त्वमिह किम् ? तुम यहाँ कैसे आये ?

कृष्ण—मन्मन्दिराशंकया—मैंने समझा कि यह मेरा ही घर है।

गोपी—बुद्धम्, तन्नवनीतकुंभविवरे हस्तं कथं न्यस्यसि ? मालूम हो गया, लेकिन तुम मक्खन के घड़े में हाथ क्यों डाल रहे हो ?

कृष्ण—कतुं तत्र पिपीलिकापनयनम्—घड़े में चींटियां पड़ गई थीं, उन्हीं को निकालने के लिये हमने हाथ डाला।

गोपी—सुप्ताः किमुद्बोधिता बालाः—अच्छा, लेकिन सोये हुए बालकों को क्यों जगाया ?

कृष्ण—वत्सगतिं विवेक्तुम्—यह विचारने के लिये कि आज बछड़े किधर चराये जायँगे ?

कवि—इति संजल्पन् हरिः पातु वः—इस प्रकार गोपी से आलाप करते हुए हरि-श्रीकृष्ण आप लोगों की रक्षा करें।

बलदेव, यशोदा और कृष्ण का संवाद

कृष्णेनाम्ब गतेन रन्तुमसकृन् मृद् भक्षिता स्वेच्छया,
सत्यं कृष्ण : क एवमाह मुशली मिथ्याम्ब पश्याननम्।
व्यादेहीति विकाशिते च वदने दृष्ट्वा समस्तं जगत्
माता यस्य जगाम विस्मयपदं पायात् स वः श्रीपतिः॥

एक बार श्रीकृष्ण ने कहीं खेलते हुए मिट्टी खा लिया और इसे बलराम ने देख लिया। फिर क्या था, बलराम ने तुरन्त आकर यशोदा से इसकी शिकायत की। पश्चात् श्रीकृष्ण के घर आने पर यशोदा श्रीकृष्ण से मिट्टी खाने का कारण पूछने लगीं और उनका मुँह देखने लगीं। पर जब उनके मुँह खोलने पर उसमें यशोदा को सारा संसार दीखने लगा तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। इस पद्य में इसी लीला का वर्णन है।

बलराम—कृष्णेनाम्ब ! गतेन रन्तुमसकृत् मृद् भक्षिता स्वेच्छया—माता, जब कृष्ण खेलने के लिये गये थे तो कई बार जानबूझकर उन्होंने मिट्टी खा लिया !

यशोदा—सत्यं कृष्ण ! कृष्ण, क्या यह बात सत्य है ?

कृष्ण—क एवमाह ? किसने ऐसा कहा माँ ?

यशोदा—मुशली-बलदेव ने ।

कृष्ण—मिथ्याम्ब, पश्याननम् । यह बिलकुल झूठ बात है माँ, मेरा मुँह देख लो ।

यशोदा—व्यादेहि-अच्छा, अपना मुँह बाओ तो ।

कवि—इति विकाशिते''इस प्रकार यशोदा के कहने पर जब श्रीकृष्ण ने मुँह बाया तो उसमें यशोदा को समस्त संसार दीखने लगा और वे आश्चर्य में पड़ गईं । ऐसी लीला करने वाले श्रीपति आपलोगों की रक्षा करें ।

गणेश, कार्तिकेय और पार्वती का संवाद

हे हेरम्ब ! किमम्ब ! रोदिषि कुतः ? कर्णौ लुठत्यग्निभूः,
किं ते स्कन्द विचेष्टितं ? मम पुरा संख्या कृता चक्षुषाम् ।
नैतत्तेऽप्युचितं गजास्य ! चरितं, प्राग् नासिका मोटिता,
श्रुत्वैवं सुतयोर्गिरं गिरिसुता स्मेरानना पातु वः ॥

एक वार गणेश जी माता पार्वती के पास रोते हुए आये और कार्तिकेय जी की शिकायत करने लगे। इस पर पार्वती जी दोनों से झगड़ने का कारण पूछने लगीं और दोनों अपनी-अपनी सफाई देने लगे। प्रस्तुत श्लोक में यही विषय बड़े मनोरंजक रूप में लिखा गया है। देखिये, बालकलह का कितना स्वाभाविक चित्रण है—

पार्वती—हे हेरम्ब ! हे गणेश !

गणेश—किमम्ब ! क्या माता ?

पार्वती—रोदिषि कुतः—क्यों रो रहे हो ?

गणेश—कर्णान् लुठति अग्निभूः—कार्तिकेय हमारी कान ऐंठ रहे हैं।

पार्वती—किं ते स्कन्द विचेष्टितम् ? अरे कार्तिकेय ! यह क्या कर रहे हो ?

कार्तिकेय—मम पुरा संख्या कृता चक्षुषाम्—माता, पहले यही हमारी आँखें गिन गिनकर हमें चिढ़ाते रहे। तब हमने इनका कान ऐंठा।

पार्वती—नैतत्तेऽप्युचितं गजास्य चरितम्—गणेश, तुमको भी तो ऐसा नहीं करना चाहता था ?

गणेश—प्राग् नासिका मोटिता—नहीं, पहले इन्होंने ही हमारी नाक मरोड़ दी, तब हम भी इनकी आँखें गिनने लगे।

कवि—श्रुत्वैवं सुतयोर्गिरं गिरिसुता स्मेरानना पातु वः। इस प्रकार दोनों बालकों की बातें सुन कर हँसती हुई गिरिसुता पार्वती आप लोगों की रक्षा करें।

यशोदा द्वारा श्रीकृष्ण को रामकथा सुनाना

रामो नाम बभूव हुँ तदबला सीतेति हुँ तौ पितुर्-
वाचा पञ्चवटीवने निवसतस्तामाहरद् रावणः ।
कृष्णेनेति पुरातनीं निजकथामाकर्ण्य मात्रेरितास्,
सौमित्रे क्व धनुर्धनुर्धनुरिति प्रोक्ता गिरः पान्तु वः ॥

बाल्यावस्था में एक बार भगवान् श्रीकृष्ण सो नहीं रहे थे तो उन्हें सुलाने के लिये उनकी माता यशोदा एक कथा कहने लगीं । पर जब तक सुनने वाला हुं-हुं न करे तब तक कथा कहने वाले का मन नहीं लगता ! अत: श्रीकृष्ण हुं-हुं करने लगे । इसी प्रसंग को लेकर निम्नांकित कविता लिखी गई है—

यशोदा—रामो नाम बभूव—एक राम नाम के राजा हुए ।

कृष्ण—हुँ ।

यशोदा—तदबला सीता—उनकी स्त्री का नाम सीता था ।

कृष्ण—हुँ ।

यशोदा—तौ पितुर्वाचा पञ्चवटीवने निवसतः—वे दोनों पिता की आज्ञा से पञ्चवटी वन में रहते थे ।

कृष्ण—हुँ ।

यशोदा—तामाहरद् रावणः—उस सीता को रावण चुरा ले गया ।

कवि—कृष्णेनेति······माता द्वारा इस प्रकार कही हुई कथा को सुन कर श्रीकृष्ण को अपने रामावतार का स्मरण हो आया और वे "अरे लक्ष्मण, धनुष कहाँ है धनुष, धनुष, इस प्रकार बोलने लगे। यह भगवान की वाणी आप लोगों की रक्षा करे।

राधा-श्रीकृष्ण-संवाद

कस्त्वं भो निशि केशवः शिरसिजैः किं नाम गर्वायसे
भद्रे शौरिरहं गुणैः पितृगतैः पुत्रस्य किं गौरवम्।
चक्री चन्द्रमुखि! प्रयच्छसि नु मे कुण्डीं घटीं दोहनीम्
इत्थं गोपवधूजितोत्तरतया ह्रीणो हरिः पातु वः॥

एक दिन श्रीकृष्ण रात्रि में श्रीराधा के समीप गये तो श्रीराधा उन से उनका परिचय पूछने लगीं। इस पर श्रीकृष्ण ने अपने जो जो नाम बतलाये उन सब का अर्थ बदल-बदल कर श्रीराधा ने श्रीकृष्ण को निरुत्तर कर दिया जिससे श्रीकृष्ण लज्जित हो गये। इस श्लोक में यही संवाद अंकित किया गया है।

राधा—कस्त्वं भो निशि? अजी, तुम रात में कौन यहाँ आ गये?

कृष्ण—केशवः[1] मैं तो केशव हूँ।

---

१. केशव शब्द के दो अर्थ हैं—कृष्ण तथा अच्छा केशवाला (प्रशस्ताः केशाः सन्ति अस्येति केशवः)

राधा—शिरसिजैः किं नाम गर्वायसे ? तो अपने बालों पर इतना गर्व क्यों कर रहे हो ?

कृष्ण—भद्रे ! शौरिरहम्—भद्रे ! मैं महाराज शूरसेन के वंश में उत्पन्न शौरि हूँ ।

राधा—गुणैः पितृगतैः पुत्रस्य किं गौरवम् ? मान लिया कि आप बहुत बड़े राजा के वंशज हैं । पर पिता के गुणों से पुत्र की क्या प्रतिष्ठा होती है ?

कृष्ण—चक्री[1] चन्द्रमुखि ? चन्द्रमुखी, मेरा नाम चक्री है ।

राधा—प्रयच्छसि नु मे कुण्डीं घटीं दोहनीम् ? यदि आप चक्री अर्थात् कुम्हार हैं तो मुझे अपनी कुण्डी, गगरी और दोहनी देने आये हो क्या ?

कवि—इत्थं गोपवधूजितोत्तरतया—इस प्रकार गोपवधू श्री राधा जी के उत्तर से पराजित हो जाने के कारण—ह्रीणो हरिः पातु वः—लज्जित श्रीकृष्ण आप लोगों की रक्षा करें ।

---

१. चक्री शब्द के दो अर्थ हैं—चक्रधारी श्रीकृष्ण तथा चक्का चलाने वाला कुम्हार

श्रीकृष्ण के साथ गोपियों का विनोद

क्वाननं क्व नयनं क्व नासिका
क्व श्रुतिः क्व च शिखेति देशितः ।
तत्र तत्र निहिताङ्गुली - दलो
बल्लवीकुलमनन्दयत् प्रभुः ॥१॥

यह स्वाभाविक वात है कि लोग वच्चों से उनके नाक, कान एवं आँख आदि के सम्वन्ध में पूछते हैं और वच्चे अपनी अंगुलि से अपने नाक-कान आदि वतलाते हैं। इसी प्रकार कभी गोपियों ने श्रीकृष्ण जी से भी उनके नाक-कान आदि वतलाने के लिये कहा तो उन्होंने भी अपनी अंगुली से अपने नाक-कान आदि वतला कर उन गोपियों का मनोरंजन किया। इस श्लोक में इसी वाललीला का वर्णन है—

गोपियाँ पूछती हैं—

क्व आननम्—लालाजी, तुम्हारा मुख कहाँ है ?
क्व नयनम्—तुम्हारी आँख कहाँ है ?
क्व नासिका—तुम्हारी नाक कहाँ है ?
क्व श्रुतिः—तुम्हारा कान कहाँ है ?
क्व च शिखा—और तुम्हारी चुटिया कहाँ है ?
इति देशितः—ऐसा पूछे जाने पर
तत्र तत्र निहितांगुलीदलः—वहाँ वहाँ अपनी अँगुली रखकर

प्रभुः बल्लवीकुलम् अनन्दयत्—प्रभु श्रीकृष्णजी ने गोपियों को आनन्दित किया।

पार्वती और शंकर का संवाद

रामाद् याचय मेदिनीं धनपतेर्बीजं बलाल्लाङ्गलं,
प्रेतेशान्महिषं तवास्ति वृषभः फालं त्रिशूलं तव।
शक्ताऽहं तव चान्नदानकरणे स्कन्दोऽस्ति गोरक्षणे,
खिन्नाऽहं हर भिक्षया कुरु कृषिं गौरीवचः पातु वः॥

एक बार शंकर जी के रात-दिन भीख माँगने से पार्वती जी घबड़ा उठीं और शंकर जी से भीख माँगना छोड़कर खेती करने के लिये प्रार्थना करने लगीं। पर खेती करने के लिये जो सामान चाहिये और काम करने वाले चाहिये, वे सब कहाँ से मिलेगें, शंकर जी ने पूछा। इस पर पार्वती जी शंकर जी को सामान जुटाने तथा काम करने वालों के विषय में अपनी राय दे रही हैं। इस श्लोक में इसी घरेलू विषय का मनोरंजक वर्णन है।

पार्वती जी कहती हैं—

रामाद् याचय मेदिनीम्—राम जी से थोड़ी जमीन माँग लीजिये,

धनपतेर्बीजम्—कुबेर से कुछ बीज माँग लीजिये,

बलाल्लाङ्गलम्—बलदेव जी से हल ले लीजिये,

प्रेतेशान्महिषम्—यमराज से उनका एक भैंसा ले लीजिये,

तवास्ति वृषभः—और आपके पास एक बैल है ही,

फालं त्रिशूलं तव—फाल के काम में आपका त्रिशूल आ जायगा,

शक्ताहं तव चान्नदानकरणे—आपके लिये खान-पान पहुँचाने का काम मैं ही कर सकती हूँ, और

स्कन्दोऽस्ति गोरक्षणे—कार्तिकेय गाय-बैल की रखवाली कर लेंगे।

खिन्नाऽहं तव भिक्षया—मैं आपके भीख माँगने से बहुत दुखी हूँ, इसलिये आप अवश्य—

कुरु कृषिम्—खेती कीजिये।

कवि—गौरीवचः पातु वः—शंकर जी के प्रति इस प्रकार कहा हुआ गौरी जी का वचन आप लोगों की रक्षा करे।

यशोदा और कृष्ण का संवाद

कालिन्दी-पुलिनोदरेषु मुसली यावद्गतः क्रीडितुं,
तावत् कर्बुरिकापयः पिब हरे वर्धिष्यते ते शिखा।
इत्थं बालतया प्रतारणपराः श्रुत्वा यशोदागिरः,
पायाद्वः स्वशिखां स्पृशन् प्रमुदितः क्षीरेऽर्धपीते हरिः॥

एक बार बचपन में श्रीकृष्ण दूध नहीं पी रहे थे। इस पर उनकी माता यशोदा ने उन्हें फुसलाया कि देखो, जबतक बलदेव यमुना के किनारे खेलते हैं तब तक तुम इस कबरी गाय का दूध पीलो तो तुम्हारी चोटी बढ़ जायगी। नहीं तो छोटी ही रह जायगी। इस लिये जल्दी करो और बलदेव के आने के पहले ही दूध पीलो। फिर श्रीकृष्ण इस भुलावे में आकर दूध पीने लगे। पर ज्यों ही आधा दूध पीए कि अपनी चोटी देखने लगे कि अभी कुछ बढ़ी या नहीं ? इस पद्य में श्रीकृष्ण की इसी बाल-लीला का वर्णन है।

यशोदा कहती हैं—

हरे !—श्रीकृष्ण !

यावत् मुशली—जब तक बलदेव जी,

कालिन्दीपुलिनोदरेषु—यमुनाजी के किनारे

क्रीडितुं गतः—खेलने के लिये गये हैं

तावत् कर्बुरिकापयः पिब—तब तक तुम कबरी गाय का दूध पी लो

वर्धिष्यते ते शिखा—क्योंकि इसके पीने से तुम्हारी चोटी बढ़ जायगी।

इत्थं बालतया—इस प्रकार लड़कपन के कारण

प्रतारणपराः यशोदागिरः श्रुत्वा—भुलावे में डालने वाली यशोदा की बातों को सुनकर

क्षीरे अर्धपीते—आधा दूध पी लेने पर

प्रमुदितः स्वशिखां स्पृशन्—प्रसन्न होकर अपनी शिखा को (बढ़ी है या नहीं इस दृष्टि से) छूते हुए

हरिः वः पायात्—हरि, श्रीकृष्ण आप लोगों की रक्षा करें।

बलि और वामन का संवाद

कस्त्वं ब्रह्मन्नपूर्वः क्व च तव वसतिर्याऽखिला ब्रह्मसृष्टिः,
कस्ते नाथो ह्यनाथः क्व च तव जनको नैव तातं स्मरामि।
किं तेऽभीष्टं ददामि त्रिपदपरिमिता भूमिरल्पं किमेतत्,
त्रैलोक्यं भावगर्भं वलिमिदमवदद्वामनो नः सः पायात्॥

एक बार विष्णु भगवान् वामन का रूप धारण कर वलि के यज्ञ में उन से कुछ माँगने के लिये गये। वहाँ जाने पर वलि और वामन में जो संवाद हुआ वही इस पद्य में वर्णित है।

बलि—कस्त्वं ब्रह्मन्? महाराज आप कौन हैं?

वामन—अपूर्वः—मैं तो एक अजीब ही आदमी हूँ।

बलि—क्व च तव वसतिः—आप का निवासस्थान कहाँ है?

वामन—याऽखिला ब्रह्मसृष्टिः—जहाँ तक ब्रह्मा की सृष्टि है वह सब हमारा निवासस्थान है।

बलि—कस्ते नाथः—आप का नाथ कौन है?

वामन—अनाथः—मैं तो बिलकुल अनाथ हूँ।

बलि—क्व च तव जनकः—आपके पिता कौन हैं ?

वामन—नैव तातं स्मरामि—पिता जी का तो मुझे स्मरण ही नहीं है। क्या बताऊँ ?

बलि—किन्तेऽभीष्टं ददामि—अच्छा तो आप क्या चाहते हैं जिसे मैं आपको दूँ ?

वामन—त्रिपद-परिमिता भूमिः—केवल तीन पग भूमि ही मैं चाहता हूँ। और कुछ मुझे नहीं चाहिये।

बलि—अल्पं किमेतत् ?—अरे, इतनी कम जमीन क्यों ?

वामन—त्रैलोक्यम्--बस, तीन पग भूमि ही मेरे लिये त्रैलोक्य के समान है महाराज !

कवि—भावगर्भं···इस प्रकार त्रिपद भूमि के स्थान पर त्रैलोक्य का गुप्त भाव रखकर बलि से याचना करने वाले वामन हम लोगों की रक्षा करें।

शिव-पार्वती-संवाद

कस्त्वं शूली मृगय भिषजं नीलकण्ठः प्रियेऽहम्,
केकामेकां कुरु पशुपतिर्नैव दृश्ये विषाणे।
स्थाणुर्मुग्धे न वदति तरुर्जीवितेशः शिवायाः,
गच्छाटव्यामिति हतवचाः पातु वश्चन्द्रचूडः ॥

एक बार शंकर जी पार्वती जी के पास आये तो विनोद में पार्वती जी उनसे पूछा कि आप कौन है ? इस पर शिवजी अपने विभिन्न नामों को बतला कर अपना परिचय देने लगे। पर जो जो शिवजी अपना नाम बतलाते थे उसका अर्थ पार्वती जी बदल देती थीं और इस प्रकार उन्होंने शिवजी को निरुत्तर कर दिया। इस श्लोक में शिव-पार्वती के इसी विनोद का वर्णन है। पाठक इसे ध्यान से पढ़ें और संख्यांकित शब्दों के दोनों अर्थों पर ध्यान दें।

पार्वती—कस्त्वम् ? आप कौन हैं ?

शिव—शूली[1]—मैं शूली हूँ अर्थात् त्रिशूलधारी शंकर हूँ।

पार्वती—यदि आप शूली अर्थात् शूल के रोगी हैं तो मृगय भिषजम्—दवा की तलाश कीजिये।

शिव—नीलकंठः प्रियेऽहम् ! प्रिये ! मैं नीलकंठ हूँ।

पार्वती—यदि आप नीलकंठ अर्थात् मयूर हैं तो—"केकामेकां कुरु" एक मयूर की बोली बोलिये तो।

शिव—पशुपतिः[3]—मैं पशुपति हूँ, मोर नहीं हूँ।

पार्वती—नैव दृश्ये विषाणे—लेकिन आपकी सींघें तो दीखतीं नहीं !

शिव—स्थाणु[4]र्मुग्धे ! अरी बावरी, तुम समझती नहीं, मैं स्थाणु हूँ।

पार्वती—न वदति तरुः—लेकिन पेड़ तो बोलता नहीं, आप तो बोल रहे हैं, फिर स्थाणु कैसे ?

---

१. त्रिशूलधारी शिव तथा शूल का रोगी।
२. शिव तथा मयूर। ३. शिव तथा साँढ। ४. शिव तथा पेड़।

शिव—जीवितेशः शिवायाः[१]—मैं शिवा अर्थात् पार्वती का पति हूँ।

पार्वती—यदि आप शिवा अर्थात् सियारिन के पति हैं अर्थात् सियार हैं तो—गच्छाटव्याम्--जंगल में जाइये। यहाँ क्या जरूरत है?

कवि—इति हतवचाः पातु वश्चन्द्रचूडः। इस प्रकार पार्वती जी से उत्तर में पराजित हुए शंकर जी आप लोगों की रक्षा करें।

राधा और श्रीकृष्ण का संवाद

कोऽयं द्वारि हरिः प्रयाह्युपवनं शाखामृगस्यात्र किं,
कृष्णोऽहं दयिते बिभेमि सुतरां कृष्णादहं वानरात्।
राधेऽहं मधुसूदनो व्रज लतां तामेव पुष्पान्विताम्,
इत्थं निर्वचनीकृतो दयितया ह्रीणो हरिः पातु वः १।

एक वार जब श्रीकृष्ण राधिका के द्वार पर गये तो वे विनोद में उनका नाम पूछने लगीं। इस पर श्रीकृष्ण ने अपने अनेक नाम बतलाये पर वे जो जो नाम बतलाते थे उन सब नामों का अर्थ राधिका ने बदल दिया और श्रीकृष्ण को निरुत्तर होने के कारण लज्जित कर दिया। इस श्लोक में यही मनोरंजक संवाद अंकित है—

---

१. पार्वती तथा सियारिन।

राधा—कोऽयं द्वारि ? अरे भाई, यह दरवाजे पर कौन है ?

कृष्ण—हरिः[1]—मैं तो हरि हूँ।

राधा—प्रयाहि उपवनम्—जब आप हरि (बन्दर) हैं तो जंगल में जाइये। शाखामृगस्य अत्र किम् ? यहाँ बन्दर की क्या आवश्यकता है ?

कृष्ण—कृष्णोऽहं दयिते ! प्रिये, बन्दर नहीं; मैं कृष्ण हूँ।

राधा—अच्छा, आप कृष्ण अर्थात् काले बन्दर हैं ! तब तो और मुश्किल है। क्योंकि "बिभेमि नितरां कृष्णादहं वानरात्" मैं काले बन्दर से बहुत डरती हूँ।

कृष्ण—राधेऽहं मधुसूदनः[3]—राधे, डरो मत, मैं काला बन्दर नहीं, मधुसूदन हूँ, अब समझी ?

राधा—व्रज लतां तामेव पुष्पान्विताम्—यदि आप मधुसूदन अर्थात् मधु खाने वाले भ्रमर हैं तो उसी खिले हुए फूल वाली लता पर जाइये जहाँ मधु मिल सकता है, यहाँ आपको क्या मिलेगा ?

कवि—इत्थम्......इस प्रकार राधा के द्वारा निरुत्तर किये जाने के कारण लज्जित हुए कृष्ण आप लोगों की रक्षा करें।

१—विष्णु और बन्दर। २. कृष्ण और काला बन्दर।
३. कृष्ण और भँवरा।

सत्यभामा और श्रीकृष्ण का संवाद

अङ्गुल्या कः कपाटं प्रहरति विशिखे माधवः किं वसन्तो,
नो चक्री किं कुलालो नहि धरणिधरः किं द्विजिह्वः फणीन्द्रः ।
नाहं घोराहिमर्दी किमुत खगपतिर्नो हरिः किं कपीन्द्रः
इत्येवं सत्यभामा-प्रतिवचनजितः पातु वश्चक्रपाणिः ॥

एक बार भगवान श्रीकृष्ण सत्यभामा का दरवाजा खटखटाने लगे। इस पर सत्यभामा अपनी सखी विशिखा से पूछने लगीं कि देखो तो यह कौन दरवाजा खटखटा रहा है। उनकी बात सुनकर श्रीकृष्ण स्वयं अपने नाम कहकर अपना परिचय देने लगे। परन्तु सत्यभामा ने उन सब नामों का अर्थ बदल कर निरुत्तर कर दिया और अन्त में भगवान् कृष्ण पराजित हो गये। इस श्लोक में यही संवाद अंकित है। पाठक नामों के अर्थपरिवर्तन को ध्यान से देखें।

सत्यभामा—अङ्गुल्या कः कपाटं प्रहरति विशिखे ! अरी विशिखे ! यह अंगुली से कौन किवाड़ो खटखटा रहा है ?

श्रीकृष्णः—माधवः[1]—मैं माधव हूँ।

सत्यभामा—किं वसन्तः ? क्या आप वसन्त हैं ?

श्रीकृष्णः—नो चक्री[2]—नहीं, मैं वसन्त नहीं, चक्री हूँ।

सत्यभामा—किं कुलालः ? क्या आप कुम्हार हैं ?

श्रीकृष्ण—नहि धरणिधरः[3]—नहीं भाई, मैं धरणिधर हूँ। वसन्त या कुम्हार नहीं हूँ।

१. कृष्ण और वसन्त। २. विष्णु तथा कुम्हार। ३. विष्णु तथा शेष।

सत्यभामा—किं द्विजिह्वः फणीन्द्रः ? तो क्या आप दो जीभ वाले सर्पराज शेष हैं ?

श्रीकृष्ण—न, अहं घोराहिमर्दी—नहीं, मैं सर्प नहीं अपि तु भयंकर सर्पों का विनाश करने वाला हूँ।

सत्यभामा—किमुत खगपतिः[1] ? तो क्या आप पक्षिराज गरुड़ हैं ? क्योंकि सर्पों का नाश तो वही करते हैं।

श्रीकृष्ण—नो हरिः[2]—नहीं, मैं गरुड़ भी नहीं, हरि हूँ मैं।

सत्यभामा—किं कपीन्द्रः—समझ गई मैं, तो फिर आप शायद बन्दर हैं क्या ?

कवि—इस प्रकार सत्यभामा के उत्तरों में पराजित चक्रपाणि आप लोगों की रक्षा करें।

पद्मावती और श्रीकृष्ण का संवाद

वंशस्ते मुरली तदस्तु भण भो गोत्रं फणीन्द्राचलो,
माताहं जगतां त्रयस्य सविता वामेतरा दृग् मम।
क्वास्ते ते शरणं त्वमेव सुमुखीत्येवं हि पद्मावतीं,
वाचा संवदयञ्जयत्यनुदिनं श्रीश्रीनिवासो हरिः।

१. पक्षिराज गरुड़। २. विष्णु तथा बन्दर।

पद्मावती राधा की एक प्रिय सखी है। एक बार उन्होंने श्रीकृष्ण से उनके वंश-गोत्र आदि के सम्बन्ध में विनोद की दृष्टि से प्रश्न किया तो उन्होंने भी उसी प्रकार विनोदमय उत्तर दिया। प्रस्तुत श्लोक में उसी विनोदमय' प्रश्नोत्तर का उल्लेख है।

पद्मावती—वंशस्ते—महाशय, आपका वंश (कुल) क्या है ?

श्रीकृष्ण—मुरली—हमारा वंश (बाँस) तो मुरली है।

पद्मावती—तदस्तु—अच्छा, मुरली ही आपका वंश सही, पर--भण भो गोत्रम्—अपना गोत्र तो बतलाइये।

श्रीकृष्ण—गोत्रं फणीन्द्राचलः—हमारा गोत्र (गाय बचाने वाला) तो गोवर्धन पर्वत है।

पद्मावती—(और आपकी माता और पिता कौन है ?)

श्रीकृष्ण—माताऽहं जगतां त्रयस्य—तीनों जगत का माता (बनाने वाला) तो मैं स्वयं हूँ। और सविता वामेतरा दृग् मम—सविता हमारी दाईं आँख है।

पद्मावती—क्वास्ते ते शरणम्? आपका शरण कौन है?

श्रीकृष्ण—त्वमेव सुमुखि ! सुमुखि ! शरण तो हमारी तुम्हीं हो, और कौन है ?

कवि—एवं हि पद्मावतीम्...इस प्रकार पद्मावती को प्रतिदिन विनोदपूर्ण वचनों से अनुरंजित करते हुए भगवान् श्रीनिवास कृष्ण का सदा विजय हो।

पार्वती और लक्ष्मी का कलह

लोले ब्रूहि कपालिकामिनि पिता कस्ते पतिः पाथसां,
कः प्रत्येति जलादपत्यजननं प्रत्येति यः प्रस्तरात् ।
इत्थं पर्वत - सिन्धुराज - सुतयोराकर्ण्य वाक्चातुरीं,
सस्मेरस्य हरेर्हरस्य च मुदो निघ्नन्तु विघ्नं तु वः ॥

एक बार कहीं शंकर जी और विष्णु भगवान् दोनों ही विराजमान थे। इसी बीच वहाँ लक्ष्मी और पार्वती में जन्मस्थान के सम्बन्ध में कुछ गर्मागर्म बातें हो गईं जिन्हें सुनकर शंकर और विष्णु दोनों ही हँस पड़े। प्रस्तुत श्लोक में इसी प्रसंग का वर्णन है—

पार्वती—लोले—ऐ चंचले लक्ष्मी !

लक्ष्मी—ब्रूहि कपालिकामिनि ! कहो, खप्पर वाले की बहू।

पार्वती—पिता कस्ते—तुम्हारे पिता कौन हैं ?

लक्ष्मी—पतिः पाथसाम्—जल के पति अर्थात् समुद्र हमारे पिता हैं।

पार्वती—सरासर झूठ बात है। कः प्रत्येति जलाद् अपत्यजननम् ?- भला पानी से सन्तान की उत्पत्ति का कौन विश्वास कर सकता है ?

लक्ष्मी—प्रत्येति यः प्रस्तरात्—जो पत्थर से सन्तान उत्पत्ति का विश्वास कर सकता है वही पानी से भी सन्तान उत्पत्ति का विश्वास कर सकता है।

कवि—इत्थम् ... इस प्रकार पार्वती और लक्ष्मी की वाक्चातुरी को सुनकर हँसते हुए शंकर और विष्णु का प्रमोद आप लोगों के विघ्नों को दूर करे।

अंगद-रावण-संवाद

कस्त्वं वानर ! रामराज-भवने लेखार्थ-संवाहको,
यातः कुत्र पुरागतः स हनुमान् निर्दग्ध-लङ्कापुरः।
बद्धो राक्षससूनुनेति कपिभिः सन्ताडितस्तर्जितः,
स व्रीडात्त-पराभवो वनमृगः कुत्रेति न ज्ञायते ॥

लंका को जलाकर हनुमान जी के चले जाने के बाद एक बार अंगद जी भी लंका आये और रावण से मिले। उस समय रावण और अंगद जी में जो संवाद हुआ वही प्रस्तुत श्लोक में चित्रित किया गया है।

रावण—कस्त्वं वानर !—अरे बन्दर, तू कौन है ?

अंगद—रामराजभवने लेखार्थसंवाहकः—मैं तो महाराज रामचन्द्र जी के दरबार में पत्रवाहक का काम करता हूँ।

रावण—यातः कुत्र पुरागतः स हनुमान् निर्दग्धलंकापुरः—और वह हनुमान कहाँ गया जो यहाँ पहले आया था और लंका को जला गया था ?

अंगद—बद्धो राक्षससूनुना·····उसका तो कुछ पता ही नहीं। जब वानरों को यह बात मालूम हुई कि हनुमान

को लंका में राक्षस के पुत्र ने बाँध रखा था तो कपियों ने हनुमान की दुर्बलता और कायरता से क्रुद्ध होकर उसे इतना मारा और फटकारा कि वह लज्जा और अपमान के मारे न जाने कहाँ चला गया !

हंस और बकुलों का संवाद

कस्त्वं लोहित-लोचनाऽस्यचरणो हंसः कुतो मानसात्,
किन्तत्रास्ति सुवर्णपङ्कजवनान्यम्भः सुधासन्निभम् ।
रत्नानां निचयाः प्रवाललतिका वैदूर्यरोहः क्वचित्,
शम्बूका न हि सन्ति नेति च बकैराकर्ण्य हीहीकृतम् ॥

एक बार मानसरोवर का एक हंस कहीं बकुलों के बीच आ गया। उसे देखकर सब बकुले इकट्ठे हो गये और उससे उसके निवासस्थान आदि के सम्बन्ध में पूछते हुए उसकी हँसी उड़ाने लगे। इस श्लोक में इसी आशय का प्रश्नोत्तर लिखा गया है।

वकुला—कस्त्वं लोहित-लोचनास्यचरणः ? अरे भाई, तुम कौन हो ? तुम्हारी तो आँख, मुँह और पैर सब के सब लाल हैं ?

हंस—हंसः—मैं तो हंस हूँ।

वकुला—कुतः ?—कहाँ से आ रहे हो ?

हंस—मानसात्—मान सरोवर से।

वकुला—किं तत्रास्ति ? वहाँ क्या क्या है ?

हंस—सुवर्णपङ्कजवनानि—वहाँ सुवर्ण के कमल हैं,

अम्भः सुधासन्निभम्—अमृत तुल्य मीठा पानी है,

रत्नानां निचयाः—वहाँ रत्नों की खानें हैं,

प्रवाललतिकाः—मूगों की लतायें हैं, और

वैदूर्यरोहः क्वचित्—कहीं पर वैदूर्यमणि भी हैं।

वकुला—शंबूकाः नहि सन्ति ? क्या वहाँ घोघें नहीं हैं ?

हंस—न—नहीं, वहाँ घोघें तो नहीं हैं।

कवि—इति वकैः आकर्ण्य ही ही कृतम्—जब वकुलों ने सुना कि वहाँ घोघें नहीं हैं तो इसे मानसरोवर की बहुत बड़ी कमी समझ कर सब वकुले ही ही कर हँस पड़े।

एक पुरुष और तमाकू का संवाद

भ्रातः कस्त्वं तमाखुर्गमनमिह कुतो वारिधेः पूर्वपारात्,
कस्य त्वं दण्डधारी नहि तव विदितं श्रीकलेरेव राज्ञः।
चातुर्वर्ण्यं विधात्रा विविधविरचितं ब्रह्मणा धर्महेतोः,
एकीकर्तुं बलात्तन्निखिलजगति रे शासनादागतोऽस्मि ॥

तमाकू जब सबसे पहले समुद्र से ... नगर की ओर आ रहा था तो एक व्यक्ति की उससे मुलाकात हो गई और उस व्यक्ति ने तमाकू का परिचय

और आगमन का कारण पूछा। इस पर तमाकू ने जो मनोरंजक उत्तर दिया उसी का इस श्लोक में चित्रण किया गया है।

पुरुष—भ्रातः कस्त्वम् ? भाई आप कौन हैं ?

तमाकू—तमाखुः—मैं तो तमाकू हूँ।

पुरुष—गमनमिह कुतः ? इधर कहाँ से आ रहे हैं ?

तमाकू—वरिधेः पूर्वपारात्—समुद्र के पूर्वी पार से।

पुरुष—कस्य त्वं दण्डधारी ?—आप किसके दण्डधारी (कर्मचारी) बनकर इधर घूम रहे हैं ?

तमाकू—नहि तव विदितम्, श्री कलेरेव राज्ञः—क्या आप को मालूम नहीं, मैं महाराज कलियुग का ही दण्डधारी हूँ।

चातुर्वर्ण्यम्······विधाता ब्रह्मा जी के द्वारा धर्म के लिये विविध प्रकार से बनाये हुए चातुर्वर्ण्य को अर्थात् वर्णव्यवस्था को जबर्दस्ती एक में मिलाने के लिये मैं महाराज कलि के ही आदेश से सम्पूर्ण संसार में भ्रमण करने आया हूँ।

एक दुर्जन और सज्जन का संवाद

कस्त्वं भद्र ! खलेश्वरोऽहमिह किं घोरे वने स्थीयते,
शार्दूलादिभिरेव हिंस्रपशुभिः खाद्योऽहमित्याशया।
कस्मात् कष्टमिदं त्वया व्यवसितं मद्देहमांसाशिनः,
प्रत्युत्पन्न - नृमांस - भक्षण - धियस्ते घ्नन्तु सर्वानपि ॥

एक व्यक्ति का नाम था "खलेश्वर" अर्थात् दुष्टों का राजा । वह एक वार जब घूमता हुआ किसी जंगल में गया तो वहाँ किसी सज्जन ने उससे वन में आने का कारण पूछा । इस पर खलेश्वर जी ने अपने वन में आने का जो कारण बतलाया वह उनके नाम के कितना अनुरूप है, यह देखने ही लायक है । पाठक, उनके उत्तर पर ध्यान देंगें ।

प्रश्न—कस्त्वं भद्र ! महाशय, आप कौन हैं ?

उत्तर—खलेश्वरोऽहम्—मैं तो खलेश्वर हूँ ।

प्रश्न—इह किं घोरे वने स्थीयते ? इस भयंकर वन में आप कैसे रह रहे हैं ?

उत्तर—शार्दूलादिभिरेव हिंस्रपशुभिः खाद्योऽहम् इत्याशयां—सिंह आदि हिंसक जानवर मुझे खा जायँ, इसी इच्छा से मैं यहाँ आया हूँ ।

प्रश्न—कस्मात् कष्टमिदं त्वया व्यवसितम् ? अरे राम राम ! इतना बड़ा कठिन काम करने का आपने संकल्प क्यों किया है ?

उत्तर—मद्देहमांसाशिनः—यह संकल्प इसलिये लिया है कि मेरे शरीर के मांस को खा जाने से इन पशुओं को मनुष्य का मांस खाने की आदत लग जाय और वे सब मनुष्यों को मार कर खा जायँ ।

कितना उत्तम विचार है ! खलेश्वर जी को धन्यवाद !

मेढक और राजहंस का संवाद

हे पक्षिन्नागतस्त्वं कुत इह ? सरसः तत् कियद्भो विशालं,
किं मद्धाम्नोऽपि ? बाढं तदतिशठ महापापं मा ब्रूहि मिथ्या।
इत्थं कूपोदरस्थः शपति तटगतं दर्दुरो राजहंसं,
नीचः प्रायः शठार्थो भवति हि विषमो नापराधेन हृष्टः ॥

एक बार एक राजहंस मानसरोवर से उड़ता हुआ एक कूएँ पर आ बैठा। उस कूएँ में एक मेढक भी रहता था। जब उसने राजहंस को देखा तो उससे उसके नाँव-गाँव आदि पूछने लगा। जब राजहंस ने अपना सही-सही परिचय दिया तो मेढक उसके सामने अपनी डींग हाकने लगा और उसे भला-बुरा कहने लगा। इस श्लोक में इसी प्रसंग का चित्रण किया गया है।

मेढक—हे पक्षिन्, आगतस्त्वं कुत इह—हे पक्षी, तुम यहाँ कहाँ से आये हो ?

राजहंस—सरसः—मैं तो यहाँ एक सरोवर से आ रहा हूँ।

मेढक—तत् कियद् भोः ? वह सरोवर कितना बड़ा है जी ?

राजहंस—विशालम्—बहुत बड़ा है।

मेढक—किं मद्धाम्नोऽपि—क्या मेरे निवासस्थान कूएँ से भी बढ़कर है ?

राजहंस—बाढम्—जी हाँ, उससे बहुत बड़ा है।

मेढक—तदतिशठ महापाप मा ब्रूहि मिथ्या—(इस पर

बिगड़ कर मेढक ने कहा) महापापी, बदमाश, इतना झूठ तो मत बोल ।

कवि—इत्थं कूपोदरस्थः……इस प्रकार कूआँ का मेढक कूएँ पर बैठे हुए राजहंस को खरी-खोटी बातें सुनाने लगा ।

क्योंकि नीच आदमी हमेशा दुष्टतापूर्ण ही बातें किया करता है, कुटिल होता है और बिना अपराध के आदमी से भी प्रसन्नतापूर्वक बातें नहीं करता ।

एक कवि और व्यक्ति का संवाद

कस्त्वं भोः, कविरस्मि, काऽप्यभिनवा सूक्तिः सखे पठ्यताम्,
त्यक्ता काव्यकथैव सम्प्रति मया, कस्मादिदं, श्रूयताम् ।
यः सम्यग् विविनक्ति दोषगुणयोः सारं स्वयं सत्कविः,
सोऽस्मिन् भावक एव नास्त्यथ भवेद्दैवान्न निर्मत्सरः ॥

एक व्यक्ति को कहीं किसी कवि से मुलाकात हो गई । फिर परिचय पाने के बाद जब उन्होंने कवि जी से एक कविता पढ़ने के लिये कहा तो इसका जो उत्तर कवि जी ने दिया उसे पाठक उन्हीं के मुँह से सुनें ।

प्रश्न—कस्त्वं भोः—कहिये महाशय, आप कौन हैं ?

उत्तर—कविरस्मि—मैं तो कवि हूँ ।

प्रश्न—काऽप्यभिनवा सूक्तिः सखे ! पठ्यताम्—तो फिर मित्र, एक कोई नई कविता तो सुनाइये ।

उत्तर—त्यक्ता काव्यकथैव सम्प्रति मया—मैंने तो इस समय कविता की बात करना भी छोड़ दिया है। कविता सुनाना तो और दूर की बात है।

प्रश्न—कस्मादिदम्—अरे, आपने ऐसा निर्णय क्यों कर लिया?

उत्तर—श्रूयताम्—सुनिये, कविता की बात छोड़ने का कारण यह है कि—

यः सम्यक् विविनक्ति.......जो स्वयं उत्तम कवि है और गुण-दोषों के सार का अच्छी तरह विवेचन करता है वह दूसरों की रचनाओं पर ध्यान ही नहीं देता और यदि संयोगवश देता भी है तो मत्सरता के साथ ही देता है, निर्मत्सर होकर नहीं। इसीलिये हमने कविता की बात करना भी छोड़ दिया है।

राही और ब्राह्मण का संवाद

विप्राऽस्मिन् नगरे महान् कथय कस्तालद्रुमाणां गणः,
को दाता रजको ददाति वसनं प्रातर्गृहीतं निशि।
को दक्षः परदारवित्तहरणे सर्वोऽपि दक्षो जनः,
कस्माज्जीवसि हे सखे विषकृमिन्यायेन जीवाम्यहम् ॥

एक समय कोई व्यक्ति कहीं से किसी नगर में आया और वहाँ के लोगों के सम्बन्ध में किसी ब्राह्मण से कुछ बातें पूछने लगा। इस पर उस ब्राह्मण ने प्रश्नकर्ता महाशय को जो चमत्कारिक उत्तर दिया वही इस श्लोक में उल्लिखित है।

प्रश्न—विप्राऽस्मिन् नगरे महान् कथय कः ? बाबाजी, यह तो बतलाइये कि इस नगर में सबसे बड़ा कौन है ?

उत्तर—तालद्रुमाणां गणः—इस नगर में सबसे बड़े तो ताल के पेड़ हैं। कोई आदमी यहाँ बड़ा नहीं है।

प्रश्न—को दाता ? इस नगर में दाता कौन है ?

उत्तर—रजकः, ददाति वसनं प्रातर्गृहीतं निशि—इस नगर मे दाता तो धोबी है। क्योंकि जो वस्त्र सबेरे ले जाता है उसे शाम को पुनः दे जाता है।

प्रश्न—को दक्षः ? और इस नगर में चतुर कौन है ?

उत्तर—परदारवित्तहरणे सर्वोऽपि दक्षो जनः—हाँ, दूसरे की स्त्री और दूसरे के धन के अपहरण में तो सब लोग चतुर हैं। इसमें कमी नहीं है।

प्रश्न—कस्माज्जीवसि हे सखे ! मित्र, फिर ऐसे गाँव में आप किस प्रकार जी रहे हैं ?

उत्तर—विषकृमिन्यायेन जीवाम्यहम्—क्या कहूँ ? किसी प्रकार जहर का कीड़ा जिस प्रकार जहर में ही रहता है उसी प्रकार मैं इस गाँव में रहता हूँ।

प्रहेलिका (पहेलियाँ)

(१)

अपदो दूरगामी च, साक्षरो न च पण्डितः ।
अमुखः स्फुटवक्ता च, यो जानाति स पण्डितः ।।

पैर नहीं है पर दूर तक चला जाता है । साक्षर है पर पण्डित नहीं है । और मुँह न होने पर भी सब बातें साफ-साफ बतला देता है । इसे जो जाने वही पण्डित है ।

(२)

अस्ति ग्रीवा शिरो नास्ति, द्वौ भुजौ कर-वर्जितौ ।
सीता-हरण-सामर्थ्यो, न रामो न च रावणः ।।

गरदन है पर शिर नहीं है । दो भुजायें हैं पर उनमें हाथ नहीं हैं । वह सीता[१] का हरण करने वाला है पर न वह राम है न रावण ।

(३)

गोपालो नैव गोपालः त्रिशूली नैव शङ्करः ।
चक्रपाणिः स नो विष्णुः यो जानाति स पण्डितः ।।

१—खेत में बनी हुई हल की रेखा ।

गौओं का पालन करता है पर गोपाल (कृष्ण) नहीं है। वह त्रिशूलधारी है पर शंकर नहीं है। उसके हाथ में चक्र है पर वह विष्णु नहीं है। इसे जो जानता है वह पण्डित है।

(४)

न तस्यादिर्न तस्यान्तो मध्ये यस्तस्य तिष्ठति।
तवाऽप्यस्ति ममाऽप्यस्ति यदि जानासि तद्वद ।।

न उसका आदि है और न उसका अन्त है। उसके मध्य में य रहता है। और वह तुमको भी है हमको भी है। यदि जानते हो तो बतलाओ।

(५)

नर-नारी-समुत्पन्ना सा स्त्री देहविवर्जिता।
अमुखी कुरुते शब्दं जातमात्रा विनश्यति ।।

एक स्त्री है जो पुरुष और स्त्री से उत्पन्न है पर देह से रहित है। वह बिना मुँह के ही शब्द करती है और पैदा होते ही नष्ट हो जाती है।

(६)

य एवादिः स एवान्तो मध्ये भवति-मध्यमः।
य एतन्नाभिजानाति तृणमात्रं न वेत्ति सः।।

य आदि में है स अन्त में है और मध्य में व है।

इसे जो नहीं जानता वह तृणमात्र भी कुछ नहीं जानता है।

(७)

एकचक्षुर्न काकोऽयं विलमिच्छन्न पन्नगः ।
क्षीयते वर्द्धते चैव न समुद्रो न चन्द्रमाः ।

एक ही आँख है पर वह कौआ नहीं । बिल में घुसना चाहता है पर सर्प नहीं है । वह घटता है और बढ़ता है पर न समुद्र है न चन्द्रमा ।

(८)

वृक्षाग्रवासी न च पक्षिराजः,
त्रिनेत्रधारी न च शूलपाणिः ।
त्वग्वस्त्रधारी न च सिद्धयोगी,
जलं च बिभ्रन्न घटो न मेघः ।।

वह पेड़ के सबसे ऊपर रहता है पर पक्षी नहीं है । उसके तीन नेत्र हैं पर वह शंकर नहीं है । वह छाल का ही कपड़ा पहनता है पर योगी नहीं है और जल का भी धारण करता है पर न घड़ा है न मेघ ।

(९)

अस्थि नास्ति शिरो नास्ति बाहुरस्ति निरङ्गुलिः ।
नास्ति पादद्वयं किन्तु गाढमालिङ्गति स्त्रियम् ।।

न उसके हड्डी है न शिर है । बाँह है पर बिना अँगुलियों के । दोनों पैर भी नहीं है फिर भी वह बहुत ही गाढ आलिङ्गन करता है ।

(१०)

आपाण्डु पीन-कठिनं वर्तुलं सुमनोहरम्।
करैराकृष्यतेऽत्यर्थं किं वृद्धैरपि सस्पृहम् ॥

वह कौन चीज है जो खूब पीला, मोटा, कड़ा, गोल और बहुत सुन्दर है तथा उसे बुड्ढे लोग भी बड़ी लालच के साथ हाथों से खींचा करते हैं ?

(११)

जात्या विहङ्गो न परं सपक्षः
शब्दायमानो गगने विहारी ।
युद्धाऽनुकूलो न गजो न चाऽश्वः
विविच्य नाम्ना वद किं तदेतत् ॥

वह जाति का विहङ्गम है पर उसको पाँख नहीं है। वह शब्द करता हुआ आकाश में ही विहार करता है। वह युद्ध के काम में आता है पर न हाथी है न घोड़ा। सोच-समझ कर बतलाओ कि यह कौन चीज है ?

(१२)

पर्वताग्रे रथो याति भूमौ तिष्ठति सारथिः।
चलते वायुवेगेन पदमेकं न गच्छति ॥

पर्वत के ऊपर रथ चलता है पर सारथि जमीन पर रहता है। वह रथ वायु के वेग से चलता है पर एक पैर भी आगे नहीं बढ़ता।

(१३)

वने वसति को वीरो योऽस्थि-मांस-विवर्जितः ।
असिवत् कुरुते कार्यं कार्यं कृत्वा वनं गतः ॥

बिना हड्डी और मांस का वह कौन वीर है जो पानी में रहता है और तलवार सा काम करता है तथा काम करके पुनः पानी में चला जाता है ।

(१४)

दन्तैर्हीनः शिलाभक्षी निर्जीवो बहुभाषकः ।
गुण-स्यूति-समृद्धोऽपि परपादेन गच्छति ॥

दाँत नहीं हैं फिर भी कंकड़-पत्थर खाता है, निर्जीव है फिर भी बहुत बोलता है तथा बहुत गुणों से युक्त रहने पर भी दूसरों के पैर से चलता है । यह कौन चीज है ?

(१५)

कृष्णमुखी न मार्जारी द्विजिह्वा न च सर्पिणी ।
पञ्चभर्त्री न पाञ्चाली यो जानाति स पण्डितः ॥

काला मुँह है पर बिल्ली नहीं है, दो जीभ है पर साँपिन नहीं है उसके अनेक पति है पर द्रौपदी नहीं है, इसे जो जाने वह पण्डित है ।

(१६)

चक्री त्रिशूली न हरिर्न शम्भुः
महान् बलिष्ठो न च भीमसेनः ।
स्वच्छन्दचारी नृपतिर्न योगी
सीतावियोगी न च रामचन्द्रः ॥

चक्र धारण करता है पर विष्णु नहीं है, त्रिशूल धारण करता है पर शंकर नहीं है, महान् बलवान् है पर भीमसेन नहीं है, स्वच्छन्द विचरता है पर न राजा है न योगी और 'सीता' से वियुक्त है पर रामचन्द्र नहीं है। ऐसी कौन वस्तु है बताओ।

(१७)

सर्वस्वापहरो न तस्करगणो रक्षो न रक्ताशनः
सर्पो नैव बिलेशयोऽखिल निशाचारी च भूतोऽपि न।
अन्तर्धानपटुर्न सिद्धपुरुषो नाप्याशुगो मारुतः
तीक्ष्णास्यो न तु सायकस्तमिह ये जानन्ति ते पण्डिताः॥

सबकी निद्रा भंग कर देता है पर चोर नहीं है, खून पीता है पर राक्षस नहीं है, बिल में रहता है पर साँप नहीं है, रात भर जागता रहता है पर भूत नहीं है, छिप जाने में चतुर है पर सिद्ध पुरुष नहीं है, जल्दी चलता है पर वायु नहीं है और उसका मुँह बहुत तीक्ष्ण है पर वाण नहीं है। इस चीज को जो जानते हैं वे ही पण्डित हैं।

उत्तर—१. चिट्ठी। २. हल। ३. साँढ। ४. नयन। ५. चुटकी। ६. यवस। ७. सूई। ८. गुरियल। ९. कुर्ता। १०. बेल। ११. विमान। १२. कुम्हार का चक्का। १३. कुसुर का डोरा। १४. जूता। १५. लेखनी। १६. साँढ। १७. खटमल।

१—हल से जुती हुई जमीन।

समस्यापूर्ति

(१)

समस्या---ठं ठं ठ ठं ठं ठ ठ ठं ठ ठं ठम्

रामाभिषेके मदविह्वलायाः
कराच्च्युतो हेमघटस्तरुण्याः ।
सोपानमासाद्य चकार शब्दं
ठं ठं ठ ठं ठं ठ ठ ठं ठ ठं ठम् ॥

रामचन्द्र जी के राज्याभिषेक के समय कोई आनन्द से उन्मत्त महिला सोने का घड़ा लेकर सीढी पर चढ़ रही थी तो उसके हाथ से घड़ा छूट गया और सीढी पर गिरते समय उस घड़े से ठं ठं आदि आवाज होने लगी ।

(२)

समस्या---गुलुग्गुलु गुलुग्गुलु

जम्बूफलानि पक्वानि पतन्ति विमले जले ।
कपिकम्पित - शाखाभ्यो गुलुग्गुलु गुलुग्गुलु ॥

जामुन के पेड़ों की डालियों को जब बन्दर हिलाते हैं तो पके हुए जामुन स्वच्छ पानी में गुलुग्गुलु गुलुग्गुलु बोलते हुए गिरते हैं ।

श्लोकसूची तथा आधार ग्रन्थ

१—कस्त्वं बाल····	श्रीकृष्णकर्णामृतम्	२.८१
२—कृष्णेनाम्ब ····	श्रीकृष्णकर्णामृतम्	२.६४
३—हे हेरम्ब····	सुभाषितरत्नभाण्डागार:	१२.३०
४—रामो नाम····	श्रीकृष्णकर्णामृतम्	२.७१
५—कस्त्वं भो निशि····	श्रीपद्यावली	२८२.
६—क्वाननं क्व····	श्रीपद्यावली	१३२.
७—रामाद् याचय····	सुभाषितरत्नभाण्डागार:	१२.२९
८—कालिन्दी····	श्रीकृष्णकर्णामृतम्	२ ६०
९—कस्त्वं ब्रह्मन्नपूर्व ····	सूक्तिरत्नावली	२.८३
१०—कस्त्वं शूली····	शार्ङ्गधरपद्धति:	८५
११—कोऽयं द्वारि····	श्रीपद्यावली	२८३.
१२—अङ्गुल्या क:····	श्रीकृष्णकर्णामृतम्	३.१०५
१३—वंशस्ते मुरली····	सुभाषित संग्रह	
१४—लोले ब्रूहि····	सुभाषितरत्नभाण्डागार:	१४.९
१५—कस्त्वं वानर····	सुभाषित संग्रह	
१६—कस्त्वं लोहित····	सुभाषितावलि:	७६३.
१७—भ्रात: कस्त्वं····	सुभाषितरत्नभाण्डागार:	१००.७
१८—कस्त्वं भद्र····	सुभाषितरत्नभाण्डागार:	६१.२७०
१९—हे [illegible]क्षिन्····	शार्ङ्गधरपद्धति:	[illegible]८.
२०—कस्त्वं [illegible]: काये····	सुभाषितरत्नभाण्डागार:	२४७.४९
२१—विप्रास्मिन्···	रसकल्पद्रुम:	११३६.
प्रहेलिका	सुभाषितरत्नभाण्डागार:	
समस्यापूर्ति	,,	

कार्यालय द्वारा प्रकाशित

बालोपयोगी साहित्य

१—वर्णमाला-गीतावलि	१—००
२—[illegible]ल शब्दकोश	०—३०
३—बालकवितावलि प्र० भाग	०—५०
४—बालकवितावलि द्वि० भाग	०—५०
५—बालनाटकम्	०—५०
६—बालामृतम्	०—५०
७—बाल निबन्ध माला	१—७५
८—सुगम शब्दरूपावलि	०—५०
९—सुगम धातु रूपावलि	०—५०
१०—बाल सदाचार शिक्षा	०—८०
११—स्तुति प्रार्थना	०—२५
१२—संस्कृत गानमाला	०—५०

(अन्य पुस्तकों के लिये बड़ी सूची मगावें.)

पुस्तक मँगाने का पता

व्यवस्थापक—सार्वभौम संस्कृत प्रचार कार्यालय

डी० [illegible]११० हौजकटोरा, वाराणसी

हुए [illegible]